International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 26-09-2025, Accepted: 26-10-2025, Published: 10-11-2025
Volume 11, Issue 4, 2025, Page No. 77-79

राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय की कहानियों में ग्राम्य जीवन का यथार्थ चित्रण ('फ़रिश्ते' कहानी संग्रह के संदर्भ में)

सतीश कुमार पाण्डेय
शोध निर्देशक, प्रो. शिवनारायण सिंह, हिंदी विभाग, पाटिलीपुत्र विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

सारांश
समकालीन कथा साहित्य का परिदृश्य आज के समाज की विविधता, जटिलता और परिवर्तनशीलता का प्रतिबिंब है। यह साहित्य पारंपरिक व्यवस्थाओं और धारणाओं को चुनौती देते हुए बदलते समाज की सच्चाई को उकेरता है। यथार्थवादी वर्णन, स्त्री विमर्श, दलित आवाज, आंचलिकता, स्थानीय रंग, सामाजिक सरोकार और सत्ता–विरोध की चेतना यह सब समकालीन कथा की केंद्रीय प्रवृत्तियाँ हैं। समकालीन कहानीकार अपने समय के समाज, संस्कृति और राजनीति के हर कोने की पहचान करते हैं और उसमें छिपी विसंगतियों, असमानता, नवीन सामाजिक जीवन और संघर्ष को कहानी की आत्मा बनाते हैं। रामचंद्र तिवारी हिंदी कहानी के पहलुओं को विवेचित करते हुए कहते हैं –"आज के हिन्दी भाषी के जीवन की विविधता और समस्याओं की जटिलता के हर पहलू को हिन्दी कहानी ने अपने में आवेष्टित कर लिया है। शिल्प, सौन्दर्य और विषय वस्तु दोनों में ही आज की हिन्दी कहानी बारह वर्ष पहले की हिन्दी – कहानी से कहीं आगे है।"[1] भाषा आम बोलचाल की, मुहावरों और देशजता से युक्त और शिल्प प्रयोगधर्मी है, जिससे पात्र, परिवेश और अनुभवों में और अधिक सजीवता आ जाती है। आधुनिक काल तक आते–आते हिंदी कथा साहित्य ने पश्चिमी कथाकारों के प्रभाव से नया स्वरूप ग्रहण किया। हालांकि, कथानक, देशकाल, चरित्र चित्रण आदि में पारंपरिक और आधुनिक कहानी–संरचना के तत्व विद्यमान थे। इसलिए कहा जा सकता है कि हिंदी कथा साहित्य पाश्चात्य कहानियों के प्रभाव में आया लेकिन उसने परंपरा से मिले तत्वों का पुनर्गठन किया; कोई पूरी तरह नया निर्माण नहीं किया। इस संक्रमण काल में कहानियों की अलौकिकता, जैसे पशु–पक्षियों का बोलना–चालना, राक्षस, भूत–प्रेत, देवी–देवता, जादू–टोना आदि तत्वों की भूमिका कम हुई। अब कथा साहित्य बुद्धिवाद, वैज्ञानिकता और यथार्थ से जुड़ा और कल्पना की उड़ान में बदलाव आया, फिर भी प्राचीन कहानियों के मूल तत्त्व आज भी मौजूद हैं।

मूल शब्दः गाँव, किसान, निबिया का पेड़, राजनीति, समाज, निर्धनता, विवशता

भूमिका
चरित्र, परिवेश और विषयवस्तु की एकाग्रता कहानी को उपन्यास से अलग करके उसकी विशिष्टता को स्थापित करती है। कहानी की संरचना में आमतौर पर वही तत्त्व होते हैं जो उपन्यास में पाए जाते हैं, इसलिए अक्सर उपन्यास और कहानी के बीच अंतर को लेकर भ्रम उत्पन्न होता है। असल में, कहानी एक एकल विषय को केंद्र में रखती है और उस विषय से विचलित नहीं होती, क्योंकि विचलन से उसकी एकीकृतता में बाधा आती है। मुंशी प्रेमचंद कहानी के संदर्भ में कहते हैं कि दृ"बसे उत्तम कहानी वह होती है जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो।"[2] वहीं, उपन्यास का दायरा व्यापक होता है, जिसमें एक साथ अनेक विषय, पात्र, घटनाएं और वृतांत होते हैं। उपन्यास का कथानक विस्तृत होता है और वह अंत तक अपने सभी विस्तारों को समेट लेता है।

कहानी और लघु–कथा के बीच भी अंतर होता है। कुछ विद्वानों ने लघु–कथा को 'बोनसाई' और कहानी को 'विकसित वृक्ष' कहा है, लेकिन यह तुलना पूरी तरह उचित नहीं है। यदि कहानी 'वटवृक्ष' है तो लघुकथा 'तुलसी का पौधा' है। दोनों आकार में भले ही अंतर हो, लेकिन दोनों ही अपने–अपने रूप में संपूर्ण और पूर्ण होती हैं।

आज की कहानी ने लंबी विकास यात्रा के बाद ऐसा स्वरूप ग्रहण किया है, जिसमें कथावस्तु की मूल संवेदना उसकी जीवंत आत्मा के रूप में काम करती है। यही विशेषता कहानी को जीवन के यथार्थ, विभिन्न प्रदेश, काल, समाज, परिवार और व्यक्ति के सामाजिक–परिस्थितिगत दबाव, सुख–दुख, संघर्ष और मानवीय अनुभवों को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत करने में सक्षम बनाती है।

आज की कहानी, चाहे छोटी हो या लंबी, मुख्य रूप से एक केंद्रित कथावस्तु पर आधारित होती है। इसकी संरचना ऐसी होती है जो सीधे पाठक के मन में असर करती है, उसकी संवेदनाओं को झकझोरती है, जैसे सूई की नोक। इस प्रकार, आधुनिक हिंदी कथा साहित्य ने नयी तकनीकों, विषयों और शैलियों को अपनाते हुए जीवन के यथार्थ को सहज और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है राजेन्द्र यादव के शब्दों में "मानवता, राष्ट्रीयता, सत्य धर्म, नैतिकता, प्राचीन गौरव आदि सब छलावे है। जिनके प्रति किसी भी कलाकार का आस्थावान होना अनुचित है।"[3]

उनकी भाषा में देशजता का स्पर्श, पात्रों के संवादों में जीवन की वास्तविकता और शिल्प में कलात्मक कसाव मिलता है। वे समाज के हाशिए पर रहे लोगों की आवाज उठाते हैंकृचाहे वह भ्रष्टाचार, विकृत यथार्थ या सामाजिक अन्याय हो। 'ठठरी' जैसी कहानियाँ व्यवस्था के छल और अमानवीयता का प्रतिरोध हैं।

इस तरह, समकालीन कथा साहित्य की विविधता, यथार्थवाद और नवीनता के बीच राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय की कहानियाँ सामाजिक विवेचना, मानवीय संवेदना और कला–संपन्नता का अद्वितीय उदाहरण हैं। वे न सिर्फ अपने समय के बल्कि भविष्य के कथा–संसार के लिए भी प्रेरणाप्रद हैं।

मनुष्य की संघर्षशील और विरोधी प्रवृत्तियों के साथ–साथ, शोषण के विरुद्ध उसकी सामाजिक चेतना ने साहित्य को नए रूप और तेवर दिए। इस दार्शनिक, विरोधी और प्रगतिशील धारा का असर प्रत्येक युग के साहित्य में किसी न किसी रूप में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

रचनाकार को अपने युग की सामाजिक स्थितियों, विशेषताओं और प्रवृत्तियों की गहरी समझ होना आवश्यक है। कोई भी लेखक अपने समय के प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता, क्योंकि उसका जीवन और व्यक्तित्व समाज की सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवेश के भीतर ही विकसित होता है। इस संदर्भ में डॉ. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय का नाम काशी की पांडित्य परंपरा में स्वतंत्रता उत्तरकालीन कथाकारों के बीच अत्यंत सम्मान के साथ लिया जाता है। उनका कथा साहित्य लोकजीवन से गहरा जुड़ा हुआ है, और उनकी सूक्ष्म, गहन एवं प्रामाणिक दृष्टि ने हिंदी कथा जगत में ग्रामीण संस्कारों और संवेदनाओं के विविध पहलुओं को बारीकी से प्रस्तुत किया है। उनके कहानी संग्रह

'फरिश्ते' में संगृहीत कहानियाँ सामाजिक यथार्थ के विभिन्न रंगों को दर्शाती हैं, जो आज के समय में भी बेहद प्रासंगिक हैं।

उनकी कहानी 'हाथ में कानून' में गुरु–शिष्य और सरकारी तंत्र की अराजकता का सजीव चित्रण किया गया है। इस कहानी में शिष्य की उदंडता और गुंडागर्दी जनता के लिए भय और दहशत का कारण बनती है। शिष्य जब गुरु के पास आता है और उनके पैर छूकर कहता है कि –"लड़के ने अपनी व्यस्तता दिखलाते हुए कहा था, "खाली आपको देखकर सलाम करने चला आया था... उत्तर में वह कुछ न बोलकर केवल अपने होंठ फड़फड़ाने लगा था।"[4] इस दौरान शिष्य ने अपनी चेन को कुर्ते की जेब से निकाल कर घुमाने की लापरवाही से गुरु की अध्यापकीय प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाई।

यह कहानी सामाजिक और प्रशासनिक तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, सत्ता के दुरुपयोग और व्यक्तित्व का ह्रास दर्शाती है, साथ ही शिष्य–गुरु संबंधों की विडम्बनाओं को भी उजागर करती है। इस प्रकार डॉ. पाण्डेय की कहानियां यथार्थ की कठोरता को प्रतिबिंबित करती हैं और पाठकों को सामाजिक विसंगतियों से अवगत कराती हैं।

कालान्तर में, राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय का उपन्यास 'गांव–बेगांव' पचास अनामिका प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास 1990 के दशक में 'स्वरिका' पत्रिका में चार–पांच किस्तों में प्रकाशित हुआ था। कथानक को 15 प्रमुख शीर्षकों में वर्गीकृत किया गया है, जिनमें सभ्यता और संकर द्वंद्व, प्रचार–पंवारा, नाच, रंडवा रमायन, घसिहाव, भुत्तहाई, पंचउर, पुजइया, बरमभीज, मेहर त्वउरवा, चुटुकवैदिया, गर्मी–सर्दी, बदला, निर्वासन आदि शामिल हैं। उपन्यास के अंत में इसकी महत्त्वता स्थापित करने हेतु सागर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर प्रेम शंकर और मुजफ्फरपुर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रेवती रमण के पत्र भी संलग्न हैं।

उनकी कहानी 'हाथ में कानून' में गुरु–शिष्य और सरकारी तंत्र की व्यावहारिक अव्यवस्था का मार्मिक चित्रण है। इसमें एक शिष्य की बदमाशी और गुंडागर्दी से जनजीवन भयभीत होता है, परंतु वह गुरु के सामने आकर उनका पैर छूते हुए कहता है कि वह उनसे मिलने केवल सलाम करने आया था।

गुरु केवल होंठ हिला कर जवाब देते हैं और व्यस्तता का हवाला देते हुए कहीं और चले जाते हैं। इसके साथ शिष्य अपनी जेब से चेन निकालकर जिस फुर्ती से उसे घुमाता है, उससे गुरु की पूरी प्रतिष्ठा धूमिल हो जाती है। यह दृश्य सामाजिक और प्रशासनिक भ्रष्टाचार के साथ–साथ चरित्र का पतन दर्शाता है। इस प्रकार, डॉ. पाण्डेय की कहानियाँ यथार्थ की कटुता को बड़े प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं और समाज की विसंगतियों पर चोट करती हैं।

यह कहानी झूठी भी है और सच भी। इसे सही अर्थों में समझ पाने वाले लोगों के हाथ यह रचना नहीं आई। इस कहानी में गाँव की खेती–बारी, पशु–पक्षी, पेड़–पौधे, सुख–दुख, तिथियां–त्यौहार आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए ग्राम्य जीवन का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत करते हैं। कई लोगों को इससे असहमति हो सकती है, लेकिन ये सारे तत्व गाँव के वास्तविक अस्तित्व का अभिन्न अंग हैं।

'फरिश्ते' संग्रह की पहली कहानी 'हाथ में कानून' समाज के यथार्थ की कई परतों को सामने लाती है। इसमें एक आदर्शवादी शिक्षक का अंतर्द्वंद्व, भीड़ की घटिया मानसिकता, शिष्य का चरित्र तथा पुलिस की कार्यप्रणाली सभी पहलुओं पर संतुलित ढंग से प्रकाश डाला गया है। शिक्षक का शिष्य गुंडागर्दी करता है, लोगों को बेरहमी से पीटता है, और बाद में ट्रेन के डिब्बे में आकर गुरु के पैर छूकर सम्मान प्रकट करता है यथा–"वह अभी मन–ही–मन कड़ाहे में जलते तेल की तरह खौल रहा था कि अचानक भय, आश्चर्य, गर्व और घृणा के तीखे आवेगों से लथपथ हो गया था। वही युवक सहसा आकर उसके पाँव छूते हुए बोला था, ष्पायलागी गुरुजी।"[5] यह दृश्य शिक्षक को भीतर तक व्यथित कर देता है। कोई साधारण शिक्षक होता तो इसे गर्व का विषय मान लेता, लेकिन इस अध्यापक ने हमेशा अपने छात्रों को संस्कार देना चाहा है और हिंसक, दादागिरी करने वाले शिष्यों की कल्पना तक नहीं की। इसीलिए उसे अपने ही शिक्षकीय गौरव का बोझ आज व्यर्थ लगने लगता है, मानो वह जोंक की तरह उसकी आत्मा से चिपककर उसे खोखला कर रहा हो।

कहानी का चरमबिंदु तब आता है जब भीड़ की हलचल सुनकर दारोगा दो सिपाहियों के साथ डिब्बे में आता है। वह भीड़ पर लाठियाँ बरसाता है और उल्टे शिक्षक को ही धमकाता है कि कानून अपने हाथ में लेने चलते हो। राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय इसी चित्रण से पुलिस की असली मानसिकता उजागर करते हैंकृ पावरफुल बदमाशों पर हाथ न डालना, उलटे उन्हें पकड़ने की कोशिश करने वाले आम नागरिकों को ही अपराधी बना देना पुलिस तंत्र का अघोषित नियम बन चुका है। लेखक इस पाखंडात्मक रवैये को व्यंग्यात्मक शैली में उभारते हैं, जहाँ दरोगा और कांस्टेबल केवल दिखावटी 'पकड़ने' का अभिनय करते नजर आते हैं।

इसी तरह उनकी लंबी कहानी फुटबॉल में राजनीतिक चालों के बीच एक ईमानदार व कर्तव्यनिष्ठ पुलिस अधिकारी के कार्यकाल और परिस्थितियों में लगातार हो रहे बदलावों का गहरा अवलोकन मिलता है। कहानी में इंस्पेक्टर और कांस्टेबल जैसे पुलिसकर्मियों का चरित्र और उनकी नौकरी की जटिल परिस्थितियाँ भी सटीक ढंग से सामने आती हैं, जहाँ उनका चालाक और स्वार्थी स्वभाव भी उजागर होता है यथा–"सब–इंस्पेक्टर माँगेराम शर्मा को दिन में तारे नजर आ रहे थे। उनके चेहरे पर इस ठंड में भी पसीने की बूँदे छलछला आई थीं। किसी बड़ी अनहोनी की आशंका ने उन्हें अपने अफसर को 'जय हिन्द' का बीस साल से अभ्यस्त सैल्यूट मारने का ध्यान भी नहीं आने दिया।"[6] इसके विपरीत, ईमानदार और मेहनती एस.पी. वेदप्रकाश शर्मा का व्यक्तित्व पूरी कहानी में प्रभावशाली रूप से उभरता है। कथा में कई ऐसे प्रसंग हैं जो भारतीय जनजीवन की वास्तविकता को दर्शाते हैं। उदाहरण स्वरूप, लाल लुंगी पहने एक व्यक्ति का गाय द्वारा पीछा किया जाना, तमाशा देखती भीड़ का मनोरंजन करना, और एक युवक द्वारा व्यक्ति को बचाने के लिए गाय पर डंडा मार देना। जब गाय का सींग टूट जाता है और यह पता चलता है कि डंडा मारने वाला मुस्लिम है, तो वही तमाशबीन भीड़ दंगाई भीड़ में बदल जाती है। इस घटना के जरिये लेखक यह संकेत देते हैं कि कितनी छोटी–सी बात से सांप्रदायिक दंगे भड़काए जा सकते हैं।

पूरी कहानी में कई घटनाएँ ऐसी हैं जो न केवल कथानक को आगे बढ़ाती हैं, बल्कि इस सच्चाई को भी रेखांकित करती हैं कि राजनीतिक हस्तक्षेप और स्वार्थी दबाव के कारण पुलिस अधिकारी निष्पक्ष ढंग से काम नहीं कर पाते। कहानी की लंबाई के बावजूद राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय का दृश्य–विधान पाठक की रुचि बनाए रखता है और उसे लगातार कहानी से जोड़कर रखता है।

राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय की कहानी 'बतछोडू' गहरी संवेदनशीलता और मानवीय भावनाओं को उजागर करती हैं। एक मार्मिक प्रसंग में बेटी अपने पिता से गुहार लगाती है कि वह नीम का पेड़ न काटें। उसका पिता कर्ज चुकाने के लिए व्यापारी के कहने पर पेड़ बेचने को तैयार है, जबकि उसी नीम पर चिड़ियाँ बैठती हैं, गांव की बेटियाँ खेलती हैं और छाँव का आनंद लेती हैं। बेटी पिता से तर्क करती है कि यह पेड़ भी बेटियों की तरह है, इसकी चिड़ियाँ भी उनके परिवार का हिस्सा हैं, जो उसके अभाव में पिता का अकेलापन दूर करेंगी। कहानी पेड़–पौधों और मनुष्य के बीच की गहन आत्मीयता को रेखांकित करती है और यह भी दिखाती है कि आज विकास के नाम पर हजारों पेड़ काटे जाते हैं लेकिन किसी के भीतर संवेदना जागती नहीं यथा–"नीम के पेड़ पर चिड़ियों के बसेरे के कारण उसे काटने से मना कर रही है जाते–जाते यह छोकरी और इसकी सहेलियाँ। आखिर अपनी माँ की ही औलाद है। पैदा होने के दिन से इसने मुझे चिन्ता–ही–चिन्ता दी है। आज जाते–जाते एक छोटी–सी

आमदनी का रास्ता भी बन्द कर रही है और अपने भाई की दुहाई भी दे रही है। भाई इंटर पास करके बेकार हो गया है। अब वह खाली गवर्नरी करेगा। हाथ का काम नहीं। दूसरों की नकल में यह छोकरा अपने हाथ–पाँव पर भरोसा नहीं रखता और सिर्फ चोरी के माल से बड़ा आदमी बनना चाहता है। इतनी मुश्किलों में मैं इस पट्टे को ढो रहा हूँ।"[7] बेटी की इस संवेदनशील बात से पिता को अपने पिता की याद आती है जिन्होंने इस नीम को लगाकर उसका नाम 'लुभावन' रखा था और उसे बेटे का भाई माना था। भावनाओं में डूबकर वह पेड़ काटने की बजाय घर की पुरानी नथुनी दे देता है, जो उसकी पत्नी की निशानी थी। इस प्रकार पेड़ और बेटी की मासूम उम्मीदें बच जाती हैं।

इसी तरह 'इल्लू–लादा' कहानी बाल–मन की गहरी समझ प्रस्तुत करती है। इसमें बच्ची रुचिरा का अपने कुत्ते 'पिल्लू राजा' से असीम लगाव है। पिल्लू की दुर्घटना में मौत हो जाने पर रुचिरा की मानसिक और शारीरिक स्थिति को लेखक ने बेहद संवेदनात्मक ढंग से चित्रित किया है। उसकी अपनी माँ से तुतलाती बोली में की गई मासूम बातचीत लेखक की बाल–मन पर गहरी पकड़ दर्शाती है यथा–" पिल्लू ने घर में प्रवेश जमीन को सूंघते हुए किया। उसके पूरे शरीर में कीचड़ और गन्दगी लिपटी थी। मगर बेटी के हठ के कारण उसकी खास आवभगत की गई। पहले पिल्लू को ही नहलाया–धुलाया गया और पीठ पर लगे घाव पर थोड़ा–सा ऐंटीसेप्टिक भी लगाया गया। बाद में रुचिरा को भी नहलाया–धुलाया गया और कपड़े बदले गए।"[8]

'ठठरी' कहानी एक बेटी के अपने पिता के प्रति गहरे प्रेम और मातृत्व भाव को दिखाती है। शुरुआत बेटी की इस पुकार से होती है—'मत जाइए पिताजी!' कारण यह है कि वह पिता के इलाज के नाम पर लगातार बिगड़ते स्वास्थ्य से चिंतित है। बाद में पता चलता है कि डॉक्टर चड्ढा कोई असली डॉक्टर नहीं, बल्कि एजेंट है, जो गरीब लोगों को नई दवाओं के परीक्षण के लिए प्रयोगशाला की तरह इस्तेमाल करवाता है यथा–"बेटी! मैं जरूर लौटूंगा। वचन देता हूँ। मैं मौत को एक बार तुझसे मिलने के लिए जरूर हराऊँगा। रो मत बेटी और अब... अब जाने दे। नहीं पिता जी नहीं! "बेटी ने इस बार मजबूर होते हुए रोकने की कोशिश नहीं की, बल्कि जाने की अनुमति–सी दी।"[9] परिवार की मजबूरी में पिता रामदास इस छलावे का शिकार हो जाते हैं। उनकी मृत्यु के बाद जब बेटी की शादी का समय आता है, तो वह आक्रोश में कहती है कि वह अपने पिता की 'ठठरी' बेचकर विवाह नहीं करेगी। उसके लिए शादी से ज्यादा जरूरी पिता की मौत का बदला है। यद्यपि डॉ. चड्ढा गिरफ्तार हो जाता है, लेकिन बेटी को न्याय पर विश्वास नहीं है क्योंकि सत्ता और धन से जुड़े लोग अक्सर बच निकलते हैं।

संदर्भ सूची

1. डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, वर्ष 2015 , पृष्ठ सं. 299
2. डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, पृष्ठ सं. 294
3. डॉ गणपति चन्द्र गुप्त, साहित्यिक निबंध, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, वर्ष 1999, पृष्ठ सं. 429
4. डॉ. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष 2024, पृष्ठ सं. 13–14
5. डॉ. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, पृष्ठ सं. 13
6. डॉ. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, पृष्ठ सं. 54
7. डॉ राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, पृष्ठ सं 28
8. डॉ राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, पृष्ठ सं 20
9. डॉ राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, फ़रिश्ते, पृष्ठ सं 31